झारखण्ड उच्च न्यायालय, रांची

सिविल रिट याचिका - 205/2023

रूबी सिंह, उम्र लगभग 35 वर्ष, पति राजीव कुमार सिंह, निवासी आर.के. सदन, गोसाई टोली, स्टेशन रोड, चुटिया, डाकघर + थाना - चुटिया, जिला-रांची, 834001, झारखंड।

... ... अपीलकर्ता

-बनाम-

1. सचिव, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार, कार्यालय - श्रम शक्ति मार्ग, नई दिल्ली, 10001, डाकघर + थाना - नई दिल्ली, जिला - नई दिल्ली।
2. मुख्य प्रबंध निदेशक, वाप्कोस (WAPCOS) लिमिटेड कार्यालय - 501, वाप्कोस (WAPCOS) लिमिटेड, वाप्कोस (WAPCOS) कार्यालय - कैलाश बिल्डिंग, के.जी. मार्ग, बाराखंभा रोड, डाकघर + थाना - बाराखंभा रोड, नई दिल्ली।
3. श्री के. रमेश बाबू, परियोजना प्रबंधक, वाप्कोस (WAPCOS) लिमिटेड इंफ्रा डिवीजन, कार्यालय - अभिलाषा हाउस नंबर 11, अशोक कुंज, अरगोड़ा, रांची, डाकघर+थाना - अरगोड़ा, जिला - रांची, झारखंड।
4. प्रधान कार्मिक, वाप्कोस (WAPCOS) मुख्यालय, प्लॉट नंबर 76 - सी, सेक्टर 18, गुड़गांव 122015, डाकघर + थाना + जिला-गुड़गांव, हरियाणा।
5. संतोष सोलंकी, पिता - पता नहीं, निवासी - सी/ओ हाउस नंबर 1, अर्जुन मुंडा, निवास – मेन रोड घोड़ाबांध, टेल्को, जमशेदपुर, डाकघर+थाना+जिला-पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर, झारखंड 831004.
6. अतुल कुमार, सी/ओ श्री. संजय सिंह, निवासी अंबिका कुटीर, टॉप फ्लोर, वारिस कॉलोनी, ओकनी, विशाल मेगा मार्ट के पास, डाकघर+थाना - हज़ारीबाग़, हज़ारीबाग़, झारखंड।

.... प्रतिवादी

न्यायालय: माननीय न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद

माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार राय

अपीलकर्ता की ओर से: श्री बिनोद सिंह, अधिवक्ता

प्रतिवादी संख्या 2-4 की ओर से: श्री पी.ए.एस. पति, अधिवक्ता

09/दिनांक: 13 फरवरी, 2024

प्रति न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद

1. दिनांक 10.01.2024 के आदेश का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसके तहत प्रतिवादी संख्या 2-4 के विद्वान वकील श्री पी.ए.एस. पति द्वारा निर्देश प्राप्त करने के लिए की गई प्रार्थना पर समय दिया गया था।
2. प्रतिवादी संख्या 2-4 के विद्वान अधिवक्ता श्री पी.ए.एस.पति ने न्यायालय से अनुमति मांगी है कि प्रति-शपथ-पत्र तैयार है तथा उसकी प्रति न्यायालय में प्रस्तुत भी कर दी गई है, अतः उसे स्वीकृति हेतु न्यायालय में दाखिल करने की अनुमति मांगी गई है।
3. यह न्यायालय उपरोक्त प्रस्तुतीकरण पर विचार करते हुए तथा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जवाबी हलफनामे में अधिकारिता का मुद्दा तत्काल रिट याचिका पर विचार करने के लिए विरोध करने का मुख्य आधार है।
4. चूंकि अधिकार क्षेत्र का मुद्दा पूरी तरह से एक कानूनी मुद्दा है और इस जवाबी हलफनामे में तथ्यात्मक पहलू विवाद में नहीं है, इसलिए खंडन का कोई सवाल ही नहीं है। इसके अलावा, यह न्यायालय केवल प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985 की धारा 14 के मद्देनजर न्यायाधिकरण के समक्ष दायर तत्काल आवेदन को बनाए रखने के अधिकार क्षेत्र के मुद्दे पर है और इस तरह, हमने दिनांक 10.01.2024 के आदेश के पैराग्राफ-2 में प्रतिवादी संख्या 2 से 4 की ओर से की गई आपति पर ध्यान दिया है, इस प्रकार, हमारा विचार है कि उपरोक्त कानूनी मुद्दे को तय करने के लिए, न्यायालय में उक्त जवाबी हलफनामे को स्वीकार करना न्यायसंगत और उचित होगा।
5. तदनुसार, उक्त प्रति-शपथपत्र को रिकार्ड पर लिया जाता है।
6. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर की गई है, जिसमें केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, पटना, सर्किट बेंच रांची द्वारा ओ.ए. संख्या 898/2022 में पारित दिनांक 13.12.2022 के आदेश को चुनौती दी गई है, जिसके तहत दिनांक 5/28/2022/कार्मिक दिनांक 19.05.2022 के कार्यालय आदेश को रद्द करने के लिए राहत मांगी गई थी, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को सहायक कार्यालय प्रबंधक के रूप में जारी रखने की अनुमति देने के लिए समानता के आधार पर मांगी गई राहत देने से इनकार कर दिया गया था।
7. रिट याचिका में की गई दलील के अनुसार मामले के संक्षिप्त तथ्य, जिन्हें यहां सूचीबद्ध करने की आवश्यकता है, इस प्रकार हैं:

याचिकाकर्ता को प्रारंभ में कार्यालय आदेश संख्या 5/28/2014/कार्मिक, दिनांक 28.08.2014 के तहत इन्फ्रा डिवीजन, वाटर एंड पावर

कंसल्टेंसी सर्विसेज (इंडिया) लिमिटेड (जिसे बाद में वाप्कोस लिमिटेड के रूप में संदर्भित किया जाएगा), रांची में 20,000/- रुपये प्रति माह के समेकित वेतन पर अनुबंध के आधार पर सहायक कार्यालय प्रबंधक के रूप में नियुक्त किया गया था। तदनुसार, समय-समय पर उसका अनुबंध बढ़ाया गया था।

कार्यालय आदेश संख्या 160/सीएनटी/एक्सटी (पीएस)/2021, दिनांक 14.01.2021 के तहत वेतनमान के आधार पर 31.12.2021 तक बढ़ाए गए अनुबंध के अनुसार, याचिकाकर्ता की नियुक्ति उपरोक्त अवधि के लिए थी या परियोजना अवधि के साथ समाप्त हो जाएगी।

याचिकाकर्ता का मामला यह है कि वह गर्भवती थी और इसके अनुसरण में, उसने 01.04.2022 से 30.09.2022 तक मातृत्व अवकाश प्रदान करने के लिए परियोजना प्रबंधक को आवेदन किया, लेकिन मातृत्व अवकाश प्रदान नहीं किया गया और यहां तक कि उसे कोई रसीद भी जारी नहीं की गई।

याचिकाकर्ता का मामला यह है कि परियोजना अभी भी चल रही है और अधिकारियों ने मामले के इस पहलू पर विचार किए बिना, कार्यालय आदेश संख्या 84/सीएनटी/ईएक्सटी/2022 दिनांक 09.02.2022 की आड़ में याचिकाकर्ता का अनुबंध समाप्त कर दिया है।

इससे व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने रांची सर्किट बेंच स्थित केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के समक्ष मूल आवेदन ओ.ए. संख्या 898/2022 के तहत दायर किया, जिसमें दिनांक 09.02.2022 के आदेश को चुनौती दी गई, जिसके तहत अनुबंध विस्तार की आड़ में याचिकाकर्ता की सेवा वस्तुतः समाप्त कर दी गई है और दिनांक 19.05.2022 के आदेश, संतोष सोलंकी की नियुक्ति आदेश, जिसके तहत याचिकाकर्ता के स्थान पर केवल पद/नामकरण बदलकर प्रतिवादी संख्या 5 को उसी कार्य के लिए नियुक्त किया गया है, जो याचिकाकर्ता को सौंपा गया था।

विद्वान न्यायाधिकरण ने दिनांक 13.12.2022 के आदेश द्वारा ओ.ए. संख्या 898/2022 को खारिज कर दिया।

8. विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश से यह स्पष्ट है कि उक्त आवेदन पर प्रतिवादियों को लिखित बयान दाखिल करने के लिए कहे बिना ही पहले दिन ही निर्णय ले लिया गया था।

मूल आवेदन में मांगी गई राहत को अस्वीकार कर दिया गया है, इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत वर्तमान रिट याचिका दायर है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री बिनोद सिंह ने विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश का विरोध करते हुए कई आधार लिए हैं।

10. प्रतिवादी संख्या 2-4 के विद्वान वकील श्री पति ने प्रस्तुत किया है कि विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश कानून की दृष्टि में अमान्य है, क्योंकि विद्वान न्यायाधिकरण को इस मामले में सुनवाई करने का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि याचिकाकर्ता को संघ के तहत उक्त पद का धारक नहीं कहा जा सकता है।

11. यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता प्रतिवादी के अधीन काम कर रहा है जिसे जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है, लेकिन इसकी स्थिति सार्वजनिक क्षेत्र की इकाई की है, जिसमें प्रशासनिक न्यायाधिकरण अधिनियम, 1985 (जिसे आगे अधिनियम, 1985 के रूप में संदर्भित किया जाता है) की धारा 14 (2) के प्रावधान के अनुसार, उपयुक्त सरकार को केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के समक्ष प्रथम दृष्टया न्यायालय का एक फोरम बनाकर अधिसूचित करना है।

श्री पति के अनुसार, अधिनियम, 1985 की धारा 14(2) के तहत जारी की जाने वाली कोई अधिसूचना नहीं है और इसलिए, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के पास इस मुद्दे पर निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं है, इसलिए यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश, अधिकार क्षेत्र की कमी के कारण, कानून की दृष्टि में अमान्य है।

12. इस आपत्ति पर याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री बिनोद सिंह ने प्रस्तुत किया है कि न्यायाधिकरण द्वारा आदेश पारित किए जाने के समय अब अधिकारिता का जो आधार लिया जा रहा है, वह स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है।

13. यह प्रस्तुत किया गया है कि जो तर्क दिया गया है वह प्रतिवादी का मामला नहीं है, उसे यह आधार लेने का कोई अवसर नहीं मिला क्योंकि यह आक्षेपित आदेश से स्पष्ट है कि जिस राहत को देने की मांग की गई थी उसे अस्वीकार करने के उद्देश्य से विपक्ष ने आक्षेपित आदेश में पहले ही आधार ले लिया है जो कि पक्षकार के गलत संयोजन का आधार है।

14. यह दलील दी गई है कि जब पक्षकारों के गलत संयोजन के आधार को मूल आवेदन को खारिज करने का आधार मान लिया गया है, तो उस स्तर पर प्रतिवादी का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील द्वारा केवल अधिकारिता का मुद्दा उठाया जाना चाहिए था, लेकिन ऐसा न किए जाने के कारण, इस स्तर पर उपरोक्त आधार पर विचार नहीं किया जा सकता।

15. इस न्यायालय ने स्थिरता के मुद्दे पर विचार करते हुए 10.01.2024 को एक आदेश पारित किया है, जिसमें श्री पति द्वारा उठाए गए उक्त मुद्दे पर ध्यान दिया गया और उनके प्रार्थना पर निर्देश प्राप्त करने के लिए समय दिया गया।

उपर्युक्त आदेश के अनुसरण में हलफनामा पारित किया गया है, जिसे ऊपर संदर्भित रूप में रिकॉर्ड पर लिया गया है।

16. यहाँ यह स्वीकार किया जाता है कि प्रतिवादी ने न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को अधिकार क्षेत्र के आधार पर चुनौती नहीं दी है। उपरोक्त तथ्य को याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री बिनोद सिंह के अधिकार क्षेत्र की कमी के मुद्दे को स्वीकार न करने के आधार के रूप में भी लिया गया है।

17. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा रिट याचिका में की गई दलीलों तथा प्रति-शपथपत्र पर भी गौर किया है।

18. इस न्यायालय को, उपर्युक्त तर्क की सराहना करने के पश्चात, निम्नलिखित मुद्दों पर विचार करना अपेक्षित है:

(i) क्या ऐसा फोरम, जिसके पास लिस पर निर्णय लेने का अधिकार नहीं है, यदि वह निर्णय लेता है, तो क्या उसे उचित कहा जा सकता है;

(ii) यदि ऐसे फोरम ने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया है, यद्यपि उसे अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं किया गया है और न्यायाधिकरण के समक्ष अधिकार क्षेत्र की कमी की कोई दलील नहीं उठाई गई है, तो क्या इसे उच्च फोरम द्वारा अधिकार क्षेत्र के मुद्दे का उत्तर दिए बिना लिस की योग्यता पर विचार करने का आधार माना जा सकता है, यदि उठाया गया हो।

19. ये दोनों मुद्दे इस विषय के मूल हैं और चूंकि दोनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, इसलिए दोनों मुद्दों पर विचार किया जा रहा है और आगे इनका उत्तर एक साथ दिया जा रहा है।

20. इस मुद्दे का उत्तर देने से पहले, यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अधिनियम, 1985 भारत के संविधान के अनुच्छेद 323-ए के तहत किए गए संशोधन के अनुसरण में अधिनियमित किया गया है। उक्त संशोधन का उद्देश्य संघ के लिए एक प्रशासनिक न्यायाधिकरण और राज्यों के लिए अलग प्रशासनिक न्यायाधिकरण या दो या अधिक राज्यों के लिए एक संयुक्त प्रशासनिक न्यायाधिकरण की स्थापना करना था। उक्त संशोधन अधिनियमित किया गया और उसके आधार पर, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण का गठन किया गया।

21. अधिनियम, 1985 में अध्याय-III के अनुसार अधिकार क्षेत्र, शक्ति और अधिकार का प्रावधान है। धारा 14 केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण के अधिकार क्षेत्र, शक्तियों और अधिकार के मुद्दे से संबंधित है। आसान संदर्भ के लिए, उक्त प्रावधान इस प्रकार है:

"**14. केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण का अधिकार क्षेत्र, शक्तियां और प्राधिकार।- (1)** इस अधिनियम में अन्यथा स्पष्ट रूप से दिए गए प्रावधान के सिवाय, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण नियत दिन से ही निम्नलिखित के संबंध में सभी न्यायालयों (सर्वोच्च न्यायालय 2*** को छोड़कर) द्वारा उस दिन से ठीक पहले प्रयोग की जा सकने वाली सभी अधिकार क्षेत्र, शक्तियों और प्राधिकार का प्रयोग करेगा-

(क) किसी अखिल भारतीय सेवा या संघ की किसी सिविल सेवा या संघ के अधीन किसी सिविल पद या रक्षा से संबंधित या रक्षा सेवाओं में किसी पद पर भर्ती और भर्ती से संबंधित मामले, जो किसी भी मामले में सिविलियन द्वारा भरा गया पद है;

(ख) निम्नलिखित से संबंधित सभी सेवा मामले-

(i) किसी अखिल भारतीय सेवा का सदस्य; या

(ii) कोई व्यक्ति [जो अखिल भारतीय सेवा का सदस्य नहीं है या खंड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति नहीं है] संघ की किसी सिविल सेवा या संघ के अधीन किसी सिविल पद पर नियुक्त किया गया है;

(iii) कोई सिविलियन [अखिल भारतीय सेवा का सदस्य न हो या खंड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति न हो] किसी रक्षा सेवा या रक्षा से संबंधित किसी पद पर नियुक्त हो,

और ऐसे सदस्य, व्यक्ति या नागरिक की सेवा से संबंधित, संघ या किसी राज्य के या भारत के क्षेत्र में या भारत सरकार के नियंत्रण में या सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण में किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकरण के मामलों के संबंध में;

(ग) संघ के मामलों से संबंधित सेवा से संबंधित सभी सेवा मामले, खंड - (ख) के उपखंड (ii) या उपखंड (iii) में निर्दिष्ट किसी सेवा या पद पर नियुक्त व्यक्ति के संबंध में, जो ऐसा व्यक्ति है जिसकी सेवाएं राज्य सरकार या किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या किसी निगम [या समाज] या अन्य निकाय द्वारा ऐसी नियुक्ति के लिए केंद्रीय सरकार के अधीन रखी गई हैं।

(2) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, उपधारा (3) के उपबन्धों को अधिसूचना में विनिर्दिष्ट तिथि से भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के

अधीन स्थानीय या अन्य प्राधिकरणों पर तथा सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाले निगमों या सोसाइटियों पर लागू कर सकेगी, जो राज्य सरकार के नियंत्रण या स्वामित्व वाले स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या निगम या सोसाइटियां न हों:
परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम द्वारा परिकल्पित योजना में परिवर्तन को सुगम बनाने के प्रयोजनार्थ ऐसा करना समीचीन समझती है, तो स्थानीय या अन्य प्राधिकरणों या निगमों या सोसाइटियों के विभिन्न वर्गों या किसी वर्ग के अन्तर्गत विभिन्न श्रेणियों के सम्बन्ध में इस उपधारा के अन्तर्गत विभिन्न तिथियां विनिर्दिष्ट की जा सकेंगी।

(3) इस अधिनियम में अन्यथा स्पष्ट रूप से दिए गए प्रावधान के सिवाय, केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, उस तारीख से ही, जिससे इस उपधारा के प्रावधान किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या निगम 1 [या सोसायटी] पर लागू होते हैं, निम्नलिखित के संबंध में सभी न्यायालयों (सर्वोच्च न्यायालय 2*** को छोड़कर) द्वारा उस तारीख से ठीक पहले प्रयोग की जाने वाली सभी अधिकारिता, शक्तियों और प्राधिकार का प्रयोग करेगा-

(क) ऐसे स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या निगम 1 [या सोसायटी] के मामलों के संबंध में किसी सेवा या पद पर भर्ती और भर्ती से संबंधित मामले; और

(ख) ऐसे व्यक्ति [उपधारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) में निर्दिष्ट व्यक्ति के अलावा] से संबंधित सभी सेवा मामले, जो ऐसे स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या निगम 1 [या सोसायटी] के मामलों के संबंध में किसी सेवा या पद पर नियुक्त किए गए हैं और ऐसे मामलों के संबंध में ऐसे व्यक्ति की सेवा से संबंधित हैं।"

22. धारा 14 से यह स्पष्ट है कि इस प्रकार गठित न्यायाधिकरण को किसी अखिल भारतीय सेवा या संघ की किसी सिविल सेवा या संघ के अधीन किसी सिविल पद या रक्षा से संबंधित या रक्षा सेवाओं में किसी पद पर भर्ती और भर्ती से संबंधित मामलों के संबंध में अधिकारिता और शक्ति प्राप्त है, जो किसी भी मामले में सिविलियन द्वारा भरा गया पद है।

धारा 14(1) की उपधारा (ख) में यह प्रावधान है कि (i) किसी अखिल भारतीय सेवा के सदस्य; या (ii) किसी व्यक्ति [जो अखिल भारतीय सेवा का सदस्य न हो या खंड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति न हो] को संघ की किसी सिविल सेवा या संघ के अधीन किसी सिविल पद पर नियुक्त किया गया हो; या (iii) किसी सिविलियन [जो अखिल भारतीय सेवा का सदस्य न हो या खंड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति न हो] को

किसी रक्षा सेवा या रक्षा से संबंधित किसी पद पर नियुक्त किया गया हो, से संबंधित सभी सेवा मामले।

धारा 14 की उपधारा (2) केन्द्रीय सरकार को शक्ति प्रदान करके धारा 14 के दायरे को बढ़ाती है, जो विशिष्ट अधिसूचना द्वारा भारत के क्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण में स्थानीय या अन्य प्राधिकरणों और सरकार के स्वामित्व वाले या नियंत्रित निगमों को शामिल कर सकती है, जो राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित या स्वामित्व वाले स्थानीय या अन्य प्राधिकरण या निगम नहीं हैं।

23. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिनियम, 1985 की धारा 14 में समावेशी प्रावधान नहीं है, बल्कि यह धारा 14(1)(बी) और (सी) में संदर्भित पूर्वोक्त प्रावधान के दायरे को व्यापक बनाकर अनन्य प्रावधान है और इसके अलावा, यदि उपयुक्त सरकार इसे उचित समझती है, तो भारत सरकार के नियंत्रण में अन्य निगम या प्राधिकरण, स्थानीय या अन्य प्राधिकरणों को शामिल किया जा सकता है।

24. इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि अधिनियम, 1985 की धारा 14(2) के मद्देनजर भारत सरकार ने विभिन्न प्रतिष्ठानों को अधिनियम, 1985 के दायरे में लाया है।

25. इस मामले में प्रतिवादी वाटर एंड पावर कंसल्टेंसी सर्विसेज (इंडिया) लिमिटेड (WAPCOS लिमिटेड) है। याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने स्वीकार किया है कि उक्त निगम केंद्र सरकार के नियंत्रण में है।

26. यह भी स्वीकार किया गया तथ्य है कि निगम के अधीन काम करने वाले व्यक्ति को संघ के अधीन सिविल पद का धारक नहीं माना जा सकता, बल्कि उन्हें केंद्र सरकार के नियंत्रण में निगम के अधीन काम करने वाला कहा गया है। इसलिए, धारा 14(1) के प्रावधान के मद्देनजर विद्वान न्यायाधिकरण का अधिकार क्षेत्र नहीं है, बल्कि अधिकार क्षेत्र तभी कहा जाएगा जब अधिनियम, 1985 की धारा 14(2) के प्रावधान के मद्देनजर केंद्र सरकार द्वारा कोई अधिसूचना जारी की गई हो।

27. इसके अलावा, यह स्वीकार्य तथ्य है कि धारा 14(2) के तहत केंद्र सरकार की कोई अलग अधिसूचना नहीं है, जो प्रतिवादी संख्या 2-4 को वैधानिक प्रावधान के तहत प्रथम दृष्टया फोरम बनाने के माध्यम से अधिनियम, 1985 के दायरे में लाती है।

28. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि रिट याचिकाकर्ता चूंकि संघ सरकार के अधीन सिविल पद का धारक नहीं है, इसलिए अधिनियम, 1985 के तहत बनाए गए फोरम को उपयुक्त फोरम नहीं कहा जा सकता।

29. दूसरा प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह यह है कि यदि क्षेत्राधिकार का मुद्दा विद्वान न्यायाधिकरण के समक्ष नहीं उठाया गया है और यदि न्यायाधिकरण द्वारा क्षेत्राधिकार मानते हुए गलत धारणा के आधार पर कोई आदेश पारित किया गया है, तो क्या उच्च न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उस पर विचार नहीं किया जा सकता है ताकि न्यायाधिकरण द्वारा की गई गलती को सुधारा जा सके।

30. कानून में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अधिकार क्षेत्र का मुद्दा मामले की जड़ तक जाता है और यदि अधिकार क्षेत्र का मुद्दा प्रथम दृष्टया न्यायालय के समक्ष न उठाया गया हो, बल्कि उच्च फोरम के समक्ष उठाया गया हो, तो भी उच्च फोरम का यह दायित्व है कि वह अधिकार क्षेत्र के मुद्दे का उत्तर दे, ताकि यदि प्रथम दृष्टया न्यायालय द्वारा कोई अवैधता की गई हो, तो उसे कायम न रहने दिया जाए।

31. इस संबंध में कानून में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यदि कोई अवैधता उच्च न्यायालय के संज्ञान में आती है, तो उसे इस सिद्धांत के आधार पर सुधारा जाना चाहिए कि अवैधता को जारी रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **उड़ीसा राज्य एवं अन्य बनाम ममता मोहंती (2011) 3 एससीसी 436** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जाना चाहिए, जिसमें पैराग्राफ 56 और 57 में यह टिप्पणी की गई है जो इस प्रकार है:

> "**56.** यह एक स्थापित कानूनी प्रस्ताव है कि अनुच्छेद 14 का उद्देश्य अवैधता को बनाए रखना नहीं है और यह नकारात्मक समानता की परिकल्पना नहीं करता है। इस प्रकार, भले ही कुछ अन्य समान स्थिति वाले व्यक्तियों को अनजाने में या गलती से कुछ लाभ दिया गया हो, ऐसा आदेश याचिकाकर्ता को समान राहत पाने का कोई कानूनी अधिकार नहीं देता है।)
>
> **57.** यह सिद्धांत न्यायिक घोषणाओं पर भी लागू होता है। एक बार जब अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि गलत आदेश पारित किया गया है, तो यह अदालत का गंभीर कर्तव्य बन जाता है कि वह गलती को सुधारे न कि उसे बनाए रखे। इसी तरह के एक मुद्दे से निपटते हुए, इस न्यायालय ने होटल बालाजी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य [1993 सप (4) एससीसी 536: ए.आई.आर 1993 एससी 1048] में निम्नलिखित टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 551, पैरा 12)
>
> > "12. ... '2. ... गलती को कायम रखना कोई वीरता नहीं है। इसे सुधारना न्यायिक विवेक की मजबूरी है। इसमें, हम पियर्स बनाम

डेलामेटर [1 NY 3 (1847): A.M.Y. पृ. 18] में न्यायमूर्ति ब्रॉनसन के बुद्धिमान और प्रेरक शब्दों से सांत्वना और शक्ति प्राप्त करते हैं: "एक न्यायाधीश को यह जानने के लिए पर्याप्त बुद्धिमान होना चाहिए कि वह गलत हो सकता है और, इसलिए, सीखने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए: इतना महान और ईमानदार होना चाहिए कि वह अपनी राय के सभी अभिमान को त्याग दे और सत्य का अनुसरण करे, चाहे वह कहीं भी ले जाए: और अपनी गलतियों को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त साहसी होना चाहिए।"

32. इस संबंध में, इस न्यायालय को प्रतिवादी पर टिप्पणी करने की आवश्यकता है कि प्रतिवादी द्वारा न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश के क्षेत्राधिकार की कमी के संबंध में प्रतिवादी द्वारा प्रति-शपथपत्र में जो भी आधार लिया गया है, उसे उच्च फोरम के समक्ष चुनौती दी जानी चाहिए थी, लेकिन प्रतिवादी को ही इस बात का कारण सबसे अच्छी तरह से ज्ञात है कि विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को उच्च फोरम के समक्ष चुनौती क्यों नहीं दी गई।

33. एक न्यायालय होने के नाते और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत जैसा भी हो शक्ति का प्रयोग करते हुए, इस मामले को ठीक करने के लिए बाध्य हैं, अगर इस मुद्दे पर निर्णय लेने में कोई अवैधता सामने आई है और यही भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 की भावना है। मूल भावना यह है कि किसी को भी अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करने या उससे अधिक करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

34. इस मामले में, यद्यपि न्यायाधिकरण के समक्ष अधिकार क्षेत्र की कमी का मुद्दा नहीं उठाया गया था, लेकिन ऐसी परिस्थितियों में, भले ही याचिकाकर्ता के खिलाफ आदेश पारित किया गया हो, उसे न्यायोचित कहा जा सकता है।

35. हम इस मुद्दे की योग्यता के संबंध में नहीं हैं, बल्कि हम यहां अधिकार क्षेत्र के आधार पर हैं, जो कि अधिनियम, 1985 की धारा 14(2) के तहत जारी की जाने वाली किसी अधिसूचना के अभाव में विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा किया गया है। चूंकि अधिकार क्षेत्र का मुद्दा मूल तक जाता है और जब विद्वान न्यायाधिकरण को कोई अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं किया गया है, तो कोई भी निर्णय या यहां तक कि एक लिस पर विचार करना एक अवैध अभ्यास कहा जाएगा।

36. यह न्यायालय "अवैध अभ्यास" शब्द को लेते हुए यह अवलोकन कर रहा है कि अवैधता एक ऐसा शब्द है जो लाइलाज है। अधिकार क्षेत्र का मुद्दा एक ऐसी अवैधता है जिसका समाधान नहीं किया जा सकता।

यह न्यायालय उपरोक्त कानूनी मुद्दे पर विचार करते हुए तथा एल. चंद्र कुमार बनाम भारत संघ, (1997) 3 एससीसी 261 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा पारित आदेश का संदर्भ लेते हुए, जिसमें पैराग्राफ-99 में यह देखा गया है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय को प्रयोग करने के लिए प्रदान की गई है। न्यायिक समीक्षा की अवधारणा न केवल विकृति के आधार पर है, बल्कि अधिकार क्षेत्र के आधार पर भी है। उक्त निर्णय का पैराग्राफ - 99 इस प्रकार है:

> "99. हमारे द्वारा अपनाए गए तर्क के मद्देनजर, हम मानते हैं कि अनुच्छेद 323-ए के खंड 2(डी) और अनुच्छेद 323-बी के खंड 3(डी), जिस सीमा तक वे संविधान के अनुच्छेद 226/227 और 32 के तहत उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को बाहर करते हैं, असंवैधानिक हैं। अधिनियम की धारा 28 और अनुच्छेद 323-ए और 323-बी के तत्वावधान में अधिनियमित सभी अन्य विधानों में "अधिकार क्षेत्र का बहिष्करण" खंड, उसी सीमा तक असंवैधानिक होंगे। संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत उच्च न्यायालयों और अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय को प्रदान किया गया अधिकार क्षेत्र हमारे संविधान की अपरिवर्तनीय बुनियादी संरचना का एक हिस्सा है। यद्यपि इस अधिकार क्षेत्र को हटाया नहीं जा सकता, परंतु अन्य न्यायालय और न्यायाधिकरण संविधान के अनुच्छेद 226/227 और 32 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का निर्वहन करने में पूरक भूमिका निभा सकते हैं। संविधान के अनुच्छेद 323-ए और अनुच्छेद 323-बी के अंतर्गत बनाए गए न्यायाधिकरणों को वैधानिक प्रावधानों और नियमों की संवैधानिक वैधता का परीक्षण करने की क्षमता प्राप्त है। हालांकि, इन न्यायाधिकरणों के सभी निर्णय उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष जांच के अधीन होंगे, जिसके अधिकार क्षेत्र में संबंधित न्यायाधिकरण आता है। फिर भी, न्यायाधिकरण कानून के उन क्षेत्रों के संबंध में प्रथम दृष्टया न्यायालयों की तरह कार्य करना जारी रखेंगे, जिनके लिए उनका गठन किया गया है। इसलिए, वादियों के लिए सीधे उच्च न्यायालयों का रुख करने की अनुमति नहीं होगा, यहां तक कि उन मामलों में भी जहां वे संबंधित न्यायाधिकरण के अधिकार क्षेत्र की अनदेखी करके वैधानिक विधानों की

वैधता पर सवाल उठाते हैं (सिवाय इसके कि जहां विशेष न्यायाधिकरण बनाने वाले विधान को चुनौती दी गई हो)। अधिनियम की धारा 5(6) वैध और संवैधानिक है और इसकी व्याख्या उसी तरीके से की जानी चाहिए जैसा हमने बताया है।"

37. जहां तक न्यायिक समीक्षा की शक्ति के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्ति का सवाल है, तो कानून अच्छी तरह से स्थापित है, जैसा कि **पश्चिम बंगाल केंद्रीय विद्यालय सेवा आयोग एवं अन्य बनाम अब्दुल हलीम एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अनुसार, **(2019) 18 एससीसी 39** में रिपोर्ट किया गया है, जिसमें पैराग्राफ-30 में इसे निम्नानुसार माना गया है:-

"30. न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, न्यायालय को यह देखना है कि क्या आरोपित निर्णय कानून की स्पष्ट त्रुटि से दूषित है। यह निर्धारित करने के लिए कि क्या कोई निर्णय रिकॉर्ड के सामने स्पष्ट त्रुटि से दूषित है, यह है कि क्या त्रुटि रिकॉर्ड के सामने स्पष्ट है या त्रुटि को स्थापित करने के लिए जांच या तर्क की आवश्यकता है। यदि किसी त्रुटि को तर्क की प्रक्रिया द्वारा स्थापित किया जाना है, उन बिंदुओं पर जहां उचित रूप से दो राय हो सकती हैं, तो इसे रिकॉर्ड के सामने त्रुटि नहीं कहा जा सकता है, जैसा कि इस न्यायालय ने सत्यनारायण बनाम मल्लिकार्जुन में एआईआर 1960 एससी 137 में रिपोर्ट किया है। यदि किसी वैधानिक नियम का प्रावधान उचित रूप से दो या अधिक निर्माणों में सक्षम है और एक निर्माण को अपनाया गया है, तो निर्णय रिट कोर्ट द्वारा हस्तक्षेप के लिए खुला नहीं होगा। यह केवल प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान की स्पष्ट गलत व्याख्या है, या उसकी अनदेखी या उपेक्षा है, या ऐसे कारणों पर आधारित निर्णय है जो कानून में स्पष्ट रूप से गलत हैं, जिसे रिट कोर्ट द्वारा सर्टिओरीरी रिट जारी करके ठीक किया जा सकता है।

38. इसी प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **टी.सी. बसप्पा बनाम टी. नागप्पा** के मामले में **(1955) 1 एससीआर 250** में रिपोर्ट की, जिसमें, यह निम्नानुसार माना गया है: -

"निर्णय या निर्धारण में कोई त्रुटि भी सर्टिओरीरी रिट के लिए उत्तरदायी हो सकती है, लेकिन यह कार्यवाही के दौरान स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली एक स्पष्ट त्रुटि होनी चाहिए, उदाहरण के लिए जब यह स्पष्ट अज्ञानता या कानून के प्रावधानों की अवहेलना पर आधारित हो। दूसरे शब्दों में, यह एक स्पष्ट त्रुटि है जिसे सर्टिओरीरी द्वारा ठीक किया जा सकता है, लेकिन यह केवल एक गलत निर्णय नहीं है।"

39. उपर्युक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए जब ऐसे आदेश में त्रुटि स्पष्ट हो।

40. इस न्यायालय को यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि कानून की स्थापित स्थिति के बारे में कोई विवाद नहीं है कि क्षेत्राधिकार का मुद्दा कार्यवाही के किसी भी चरण में उठाया जा सकता है क्योंकि क्षेत्राधिकार मामले की जड़ तक जाता है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **बलवंत एन. विश्वामित्र एवं अन्य बनाम यादव सदाशिव मुले (मृत) में एलआरएस [(2007) 8 एससीसी 706]** के माध्यम से दिए गए निर्णय का संदर्भ दिया गया है, विशेष रूप से पैराग्राफ 9 में, जो इस प्रकार है:

> "9. हमारे विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित डिक्री को "अमान्य" और "अमान्य" कहा जा सकता है। हमारी राय में, इस मुद्दे पर कानून अच्छी तरह से स्थापित है। एक डिक्री जो शून्य है और एक डिक्री जो गलत, गलत, अनियमित या कानून के अनुसार नहीं है, के बीच अंतर को अनदेखा या अनदेखा नहीं किया जा सकता है। जहां किसी न्यायालय के पास डिक्री पारित करने या आदेश देने में अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का अभाव है, ऐसे न्यायालय द्वारा पारित डिक्री या आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना, अनिर्धारित और शून्य होगा। न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का दोष मामले की जड़ तक जाता है और डिक्री पारित करने या आदेश देने के न्यायालय के अधिकार पर ही प्रहार करता है। इस तरह के दोष को हमेशा बुनियादी और मौलिक माना जाता है और न्यायालय या प्राधिकरण द्वारा पारित डिक्री या आदेश जिसका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, वह अमान्य है। ऐसे डिक्री या आदेश की वैधता को किसी भी स्तर पर चुनौती दी जा सकती है, यहां तक कि निष्पादन या संपार्श्विक कार्यवाही में भी।"

(जोर दिया गया)

41. कानून की यह भी स्थापित स्थिति है कि गलत फोरम द्वारा दिया गया सही निर्णय भी कोई निर्णय नहीं है, जैसा कि माननीय न्यायाधीश ने **पांडुरंग एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1986)4 एससीसी 436]** में कहा है। आसान संदर्भ के लिए, संबंधित पैराग्राफ 4 को इस प्रकार उद्धृत किया गया है:

> “4. जब उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा तय किए जाने वाले मामले का फैसला विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा किया जाता है, तो निर्णय अमान्य हो जाएगा, क्योंकि मामले की सुनवाई एक ऐसे न्यायालय द्वारा की गई है जिसके पास मामले की सुनवाई करने की कोई क्षमता नहीं है, यह अधिकार क्षेत्र की पूर्ण कमी का

मामला है। अभियुक्त को खंडपीठ बनाने वाले कम से कम दो विद्वान न्यायाधीशों द्वारा सुनवाई का अधिकार था और उसे दो विद्वान न्यायाधीशों के हाथों अपने अपराध या निर्दोषता के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार था। नियमों में संशोधन किए बिना इस अधिकार को नहीं छीना जा सकता। जब तक नियम लागू हैं, तब तक उसे इस अधिकार से वंचित करना मनमाना और भेदभावपूर्ण होगा, चाहे यह लापरवाही के कारण किया गया हो या अन्यथा। जानबूझकर ऐसा नहीं किया जा सकता। लापरवाही को न तो बहाने के रूप में लागू किया जा सकता है, न ही यह दुर्बलता या अवैधता को ठीक कर सकता है, ताकि अभियुक्त को नियमों के तहत उसके अधिकार से वंचित किया जा सके। जो काम कम से कम दो विद्वान न्यायाधीश कर सकते हैं, वह एक विद्वान न्यायाधीश नहीं कर सकता। भले ही निर्णय गुण-दोष के आधार पर सही हो, लेकिन यह एक ऐसे मंच द्वारा किया जाता है, जिसमें विषय-वस्तु के संबंध में सक्षमता की कमी होती है। यहां तक कि एक "गलत" मंच द्वारा "सही" निर्णय भी कोई निर्णय नहीं होता। यह कानून की नजर में अस्तित्वहीन है। और इसलिए यह अमान्य है। इसलिए अपील के तहत निर्णय कानून की नजर में कोई निर्णय नहीं है। इस न्यायालय ने मध्य प्रदेश राज्य बनाम देवादास [(1982) 1 एससीसी 552: 1982 एससीसी (क्रि) 275: एआईआर 1982 एससी 800: (1982) 3 एससीआर 81] में एक दृष्टिकोण लिया है जो हमारे दृष्टिकोण को पुष्ट करता है। इसलिए, हम अपील स्वीकार करते हैं, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को रद्द करते हैं, और मामले को उच्च न्यायालय के खंडपीठ के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए वापस उच्च न्यायालय भेजते हैं, जो दोनों पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करेगा और कानून के अनुसार इसे शीघ्रता से निपटाएगा। हम यह जोड़ना चाहते हैं कि उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह वास्तविक स्थिति को समझती और ऐसी स्थिति नहीं पैदा करती जिससे न्यायालय का समय बर्बाद होता, एक बार अपील की सुनवाई के लिए और दूसरी बार नियमों के प्रभाव पर विचार करने के लिए। कोई भी न्यायालय इस विलासिता को बर्दाश्त नहीं कर सकता है, क्योंकि इन दिनों हर न्यायालय में बकाया राशि का पहाड़ खड़ा है।"

42. इसलिए, इस न्यायालय का यह विचार है कि चूंकि इस न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने की शक्ति प्रदान की गई है और ऊपर की गई चर्चा के आधार पर, न्यायाधिकरण के पास जहां तक वर्तमान याचिकाकर्ता के मामले का संबंध है, किसी मामले पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, इसलिए न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने

के सिद्धांत के अनुसार, इस न्यायालय का यह विचार है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग किया जाना उचित है।

43. तदनुसार, विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को निरस्त एवं अपास्त किया जाता है।

44. अब मुद्दा यह होगा कि याचिकाकर्ता के लिए उपयुक्त मंच क्या होगा।

45. यह तय है कि किसी वादी को उपचारहीन नहीं बनाया जा सकता, लेकिन जब न्यायाधिकरण को संबंधित प्रतिष्ठान यानी WAPCOS लिमिटेड के कर्मचारियों के मुद्दे से निपटने की शक्ति नहीं दी गई है, तो फोरम भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत होगा।

46. श्री पति भी इस बात से सहमत हैं।

47. चूंकि हमने केवल अधिकार क्षेत्र के मुद्दे पर विचार किया है, न कि गुण-दोष पर, इसलिए इस न्यायालय का यह मत है कि विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश को अमान्य करार देते हुए याचिकाकर्ता को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर करने की स्वतंत्रता दी जा रही है।

48. तदनुसार, वर्तमान रिट याचिका का निपटारा किया जाता है।

(माननीय न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद)

(माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार राय)

यह अनुवाद सुश्री लीना मुखर्जी, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।